वीर संवत् २५०२, ज्येष्ठ शुक्ल ११, मंगलवार,
दिनांक-०८-०६-१९७६, गाथा-१-२, प्रवचन-३

यह परमात्मप्रकाश है। पहली गाथा। सिद्ध को पहले नमस्कार करते हैं। सिद्ध को नमस्कार करते हुए ऐसा कहा है कि जिन्होंने ध्यानाग्नि से कर्म को जलाकर, जिन्होंने परम आनन्द और वीतरागदशा प्राप्त की, ऐसे सिद्ध नित्य ज्ञानमय निरंजन हैं, उन्हें मैं नमस्कार करता हूँ। और वह ध्यान कैसा? ध्यानाग्नि से कर्म नाश हुआ। ध्यान कैसा है? कि अन्तर स्वरूप शुद्ध चैतन्य का सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, उससे उत्पन्न होनेवाला परमरसी सुखस्वाद, अमृत के स्वाद का जिसमें अनुभव आता है। ऐसा जो ध्यान, उस ध्यानाग्नि द्वारा कर्मों का नाश हुआ। समझ में आया?

मुमुक्षु : परपदार्थ का नाश आत्मा के भाव से होता है?

पूज्य गुरुदेवश्री : आत्मा का भाव, दूसरे का कहाँ था।

वस्तु टंकोत्कीर्ण ध्रुव जो शुद्ध चिदानन्द प्रभु एक स्वभावी वस्तु जो ध्रुव है, उसका सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, वह उसका ध्यान है। उससे उत्पन्न हुआ परमसुखसमरसी स्वाद, परमसुखसमरसी वीतरागी आनन्द स्वाद, वह ध्यान का लक्षण है। आहाहा! समझ में आया? ध्यान करना... ध्यान करना... लोग कहते हैं। परन्तु ध्यान किसका? और ध्यान में क्या होता है? ध्यान, उसका ध्येय शुद्ध चैतन्य अखण्ड परमात्मस्वरूप है। ध्यान का ध्येय और ध्येय को सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की श्रद्धा, ज्ञान की रमणता जानकर और उससे उत्पन्न हुआ आनन्द समरसीस्वभाव शान्त-आनन्द, वह ध्यान का लक्षण है। उस ध्यानाग्नि से कर्मकलंक का नाश किया।

कर्मकलंक के दो प्रकार—जड़कर्म और भावकर्म। भावकर्म का नाश किया, यह अशुद्ध निश्चयनय से कहा जाता है। विकारी भाव जो पर्याय में थे, अशुद्ध निश्चयनय से उनका नाश किया, ऐसा कहने में आता है। ३४वीं गाथा में तो ऐसा कहा। राग का नाशकर्ता नाममात्र है। है? समयसार। परन्तु यहाँ समझाया है। आत्मा अपने आनन्दस्वरूप का ध्यान करके जो आनन्ददशा प्रगट की, उसके द्वारा परमानन्ददशा परमात्म (दशा)

प्रगट की। उस दशा में अशुद्धता जो पुण्य-पाप के भाव थे, उनका नाश किया, वह अशुद्ध निश्चय से कहा जाता है। जड़कर्म का नाश किया, वह असद्भूत अनुपचार व्यवहारनय से कहा जाता है। असद्भूत अर्थात् उसकी पर्याय में नहीं। अनुपचार अर्थात् कर्म निकट— नजदीक एकक्षेत्रावगाह है, इसलिए अनुपचार कहा। व्यवहार, वह पर है, इसलिए व्यवहार कहा। असद्भूत अनुपचार व्यवहारनय से जड़कर्म का नाश किया, ऐसा कहने में आता है। आहाहा! जिसे इस नय का ज्ञान न हो, उसे कठिन पड़े, यह सब।

और शुद्ध निश्चयनय से देखें तो बन्ध और मोक्ष है ही नहीं। वह तो पर्याय में बन्ध और पर्याय में मुक्ति है। समझ में आया? अशुद्ध निश्चयनय से संसार के विकार का नाश और एकदेश शुद्धनय से सिद्धपर्याय की उत्पत्ति। और कर्म का नाश, यह तो असद्भूत अनुपचारनय से व्यवहार से कहा जाता है। वस्तु देखें तो एक समय में ज्ञायकभावरूप वस्तु जो है, उस दृष्टि से देखें तो उसमें बन्ध और मोक्ष है नहीं। पर्याय में बन्ध और पर्याय में मुक्ति है। आहाहा! ऐसा स्वरूप है। यहाँ तक आया है।

इस प्रकार कर्मरूप मलों को भस्मकर जो भगवान हुए,... सिद्ध भगवान हुए। इस विधि से हुए, ऐसा भी विधि का ज्ञान करके नमस्कार करते हैं। समझ में आया? आहाहा! **वे कैसे हैं?** कैसे हैं सिद्ध भगवान वर्तमान? **वे भगवान सिद्ध परमेष्ठी नित्य निरंजन ज्ञानमयी हैं।** ध्यानाग्नि से अशुद्धता का नाश करके, कर्म का नाश शुद्ध से होकर परमात्मपद को प्राप्त हुए हैं। आहाहा! वे भगवान सिद्ध परमेष्ठी नित्य हैं, निरंजन हैं, ज्ञानमय हैं। अब तीन की व्याख्या अपने पहले। समझ में आया? आहाहा!

यहाँ पर नित्य जो विशेषण किया है, वह एकान्तवादी बौद्ध जो कि आत्मा को नित्य नहीं मानता,.... बौद्ध मानते नहीं न नित्य, इस अपेक्षा से कहा है। ऐसे सिद्धपर्याय तो पर्यायनय की अपेक्षा से पर्यायनय का विषय है। परन्तु वस्तु सिद्धपना कायम रहेगा अथवा द्रव्यरूप से कायम है, इस अपेक्षा से उसे नित्य कहा जाता है। समझ में आया? बौद्ध **क्षणिक मानता है, उसको समझाने के लिये है।** यह नित्य शब्द लिया है सिद्ध। बौद्ध क्षणिक मानते हैं, उन्हें समझाने के लिये नित्य शब्द लिया है। सिद्ध भगवान नित्य हैं। आहाहा!

द्रव्यार्थिकनयकर आत्मा को नित्य कहा है,... देखो! वस्तु है न, वस्तु—ऐसा कहा है। द्रव्य अर्थात् वस्तु जिसका प्रयोजन है, ऐसा जो ज्ञान, वस्तु त्रिकाल जिसका प्रयोजन है, ऐसा द्रव्यार्थिकनय—ज्ञान। आहाहा! उसे देखें तो **टंकोत्कीर्ण अर्थात् टांकी का सा घड्या सुघट ज्ञायक...** अर्थात् ज्ञायकभाव, चैतन्यस्वभाव ऐसा का ऐसा अनादि है। वस्तुरूप से ज्ञानभाव, आनन्दभाव, चैतन्यस्वभाव, ऐसे स्वभाव एकरूप, द्रव्यस्वभाव में एकरूप है, उस दृष्टि से... आहाहा! **परम द्रव्य है, ऐसा निश्चय कराने के लिये नित्यपने का निरूपण किया है।** ऐसा का ऐसा भगवान अनादि से वस्तुरूप से नित्य ध्रुव एकरूप स्वभाव, जिसमें बन्ध और मोक्ष की पर्याय का भी अभाव है। आहाहा! समझ में आया? परमात्मप्रकाश में नय घटित किये हैं। जैसे द्रव्यसंग्रह में घटित किये हैं न? वैसे यहाँ घटित किये हैं।

टांकी का सा घड्या सुघट ज्ञायक... सुघट—ऐसा... ऐसा ज्ञायकभाव, ज्ञानभाव, स्वभावभाव, ध्रुवभाव, नित्यभाव, श्रद्धाभाव, ज्ञानभाव, आनन्दभाव, अस्तित्वभाव, वस्तुत्वभाव यह सब होकर ज्ञायक एकरूप शुद्ध ही है। मानो कि घड़ित हो ऐसा का ऐसा है, ऐसा कहते हैं। आहाहा! जो सम्यग्दर्शन का विषय है। आहाहा! समझ में आया? **ऐसा निश्चय कराने के लिये नित्यपने का निरूपण किया है।** सिद्ध नित्य, निरंजन और ज्ञानमय है, (ऐसे) तीन बोल प्रयोग किये हैं।

ध्यानाग्नि से भस्म किया है, यह तो पहले बात हो गयी। अब वर्तमान जो सिद्ध हैं, वे नित्य हैं, निरंजन हैं, ज्ञानमय है। नित्य बौद्ध के लिये समझाया है।

इसके बाद निरंजनपने का कथन करते हैं। भगवान परमात्मा निरंजन है। उन्हें अंजन—मैल नहीं है। यह नैयायिकमति के लिये है। **जो नैयायिकमती हैं वे ऐसा कहते हैं 'सौ कल्पकाल चले जाने पर'....** सौ-सौ कल्पकाल जाने पर तब **जगत् शून्य हो जाता है।** सब जीव मोक्ष लेते हैं। **सब जीव उस समय मुक्त हो जाते हैं। तब सदाशिव को जगत् के करने की चिन्ता होती है।** देखो! यह मूर्खाई। ऐसा वे लोग कहते हैं कि यह सब जीव समाप्त हो जाते हैं, अब यहाँ रहे कौन? इसलिए मोक्ष के जीवों को फिर कर्म लगाकर वापस संसार में भेजते हैं। आहाहा! **तब सदाशिव को जगत् के करने की**

चिन्ता होती है। इसके बाद जो मुक्त हुए थे,... मुक्त जो सिद्ध परमात्मा हुए थे, **उन सबके कर्मरूप अंजन का संयोग करके...** कर्म का संयोग करा दिया। ठीक! **संसार में पुनः डाल देता है...** वापस संसार में लाये। आहाहा!

मुमुक्षु : कैसे गप्प मारते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह है न। लोगों की श्रद्धा। वस्तुस्थिति क्या है? त्रिकाल ध्रुव है और वर्तमान उत्पाद-व्यय पर्याय है। उत्पाद-व्यय-पर्याय है, तथापि ध्रुव तो है, ऐसी दो सहित तत्त्व है, उसकी खबर नहीं। अकेले या ध्रुव को माने, यह वेदान्तमति आदि। और अकेले क्षणिक को माने, बौद्धस्थानी। दोनों तत्त्व की भूल है पूरी मूल में (भूल है)।

पर्याय से संसार, पर्याय से मोक्षमार्ग और पर्याय से मोक्ष। ये तीनों पर्याय में हैं। यदि पर्याय न माने तो तीन सिद्ध नहीं होते। और ध्रुव न माने तो ध्रुव पर्याय से सिद्ध करने जाये तो स्वयं ध्रुव है। पर्याय से सिद्ध करने जाये तो ध्रुव है। यह ध्रुव सिद्ध न हो तो ध्रुव सिद्ध तो पर्याय भी रही नहीं और द्रव्य भी रहा नहीं। आहाहा! समझ में आया? मस्तिष्क फैलाना पड़े, ऐसा है यह।

उनके सम्बोधन के लिये निरंजनपने का वर्णन किया कि.... लो! **भावकर्म-द्रव्यकर्म-नोकर्मरूप अंजन का संसर्ग सिद्धों के कभी नहीं होता।** जो भावकर्म अशुद्ध निश्चयनय से नाश किये और जड़कर्म असद्भूत अनुपचार से नाश किये, उनका कलंक फिर से नहीं आता। सिंका हुआ चना, वह फिर से उगता नहीं है; उसी प्रकार सिद्ध हुए उन्हें कर्म का कलंक नहीं होता। आहाहा! कलंक का नाश करके तो सिद्ध हुए। अब कर्मकलंक कहाँ से आया? आहाहा! मिथ्यात्व की भ्रान्ति भी स्वरूप के आश्रय से भान करके नाश की, वह भ्रानित फिर से नहीं होती। भ्रान्ति फिर से होने नहीं देता। वह पूर्ण सिद्ध हो, तब उसे कर्म का कलंक लगे और फिर संसार में आवे, ऐसी मान्यता है। यह लोग उसका माने दयानन्द सरस्वतीवाले।

मुमुक्षु : बड़े में बड़ा ग्रन्थ लिखते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : मोक्ष हो परन्तु वापस आवे।

भावकर्म-द्रव्यकर्म-नोकर्मरूप अंजन का संसर्ग सिद्धों के कभी नहीं होता।

इसीलिए सिद्धों को निरंजन ऐसा विशेषण कहा है। नित्य बौद्ध के लिये कहा; निरंजन—अंजनरहित नैयायिक मानते नहीं, उन्हें कहा। पूर्ण सिद्ध हुए, उनकी मुक्ति हुई, वे संसार में नहीं आते। जहाँ पूर्ण दशा प्रगट हो गयी। शक्ति में से व्यक्तता पूर्ण हुई। शक्तिरूप से तो सिद्धपद था। वस्तु में सिद्धपद तो था ही। मुक्तस्वरूप ही है, उसके आश्रय से मुक्त पर्याय प्रगट की, उसे अब बन्ध का कलंक आवे—ऐसा तीन काल में नहीं होता। आहाहा! 'सादि अनन्त अनन्त समाधि सुख में।' जब से पूर्ण आनन्द प्रगट हुआ, तब से अनन्त-अनन्त काल, अनन्त अनन्त समाधिसुख में भगवान सिद्ध परमात्मा विराजते हैं। उन्हें कर्म का कलंक कहना, यह अत्यन्त विरुद्ध बात है।

अब ज्ञानमय। तीसरा शब्द है न! **अब सांख्यमती कहते हैं—जैसे सोने की अवस्था में...** मनुष्य सो जाता है न? सो जाता है। **सोते हुए पुरुष को बाह्य पदार्थों का ज्ञान नहीं होता,...** सोते हुए प्राणी को बाह्य पदार्थ का ज्ञान नहीं होता। **वैसे ही मुक्त जीवों को बाह्य पदार्थों का ज्ञान नहीं होता है।** है न, जगत में एक मत है। **ऐसे जो सिद्धदशा में ज्ञान का अभाव मानते हैं,...** सिद्ध दशा में ज्ञान नहीं। सोते हुए प्राणी को जैसे बाह्य पदार्थ का ज्ञान नहीं, उसी प्रकार मुक्त हुए को बाह्य का ज्ञान नहीं, ऐसा अज्ञानी—सांख्यमति मानता है। आहाहा!

मुमुक्षु : सोते हुए का दृष्टान्त....

पूज्य गुरुदेवश्री : सोते हुए का दृष्टान्त कहा न! अज्ञानी की दलील तो होती है, दलील। पंचाध्यायी में कहा कि वे लोग दृष्टान्त देते हैं, परन्तु दृष्टान्त ठिकाने बिना के होते हैं। पंचाध्यायी में कहा है। आहाहा!

उनको प्रतिबोध कराने के लिये तीन जगत्... सिद्ध भगवान (को) तीन जगत—ऊर्ध्व, मध्यलोक, (अधोलोक) **तीन काल...** भूत-वर्तमान-भविष्य। **सब पदार्थों का...** तीन जगत, तीन कालवर्ती, **सब पदार्थों का एक समय में ही जानना है,...** जिसकी ज्ञानदशा शक्तिरूप से तो सर्वज्ञपद था। सर्वज्ञ शक्तिरूप से अर्थात् ज्ञ-स्वभाव वस्तु, ज्ञ स्वभाव; ज्ञ स्वभाव कहो या सर्वज्ञस्वभाव कहो, उसका ध्यान करके जिसने शक्ति में से व्यक्ति—सर्वज्ञदशा प्रगट की है, उस सर्वज्ञपने में तीन काल, तीन लोक में रहे हुए

पदार्थ (ज्ञात हो जाते हैं)। तीन लोक अर्थात् तीन जगत, तीन काल अर्थात् तीन कालवर्ती। उसमें रहे हुए पदार्थ, उनके द्रव्य, गुण और पर्याय एक समय में जाने, ऐसी सिद्ध की दशा होती है।

जिसमें समस्त लोकालोक के जानने की शक्ति है,... पर्याय की बात है, हों! यह। वस्तु है अस्ति तत्त्व, आत्मा, उसमें ज्ञानशक्ति है। ज्ञानशक्ति का सामर्थ्य, सामर्थ्य तीन काल—तीन लोक को जानने का है। उसका सामर्थ्य ही इतना है। उस सामर्थ्य में से पर्याय प्रगट की। वास्तव में तो जो सामर्थ्य है, वह पर्याय में अनन्तवें भाग की ज्ञानदशा आयी है। आहाहा! नियमसार में कहा है न कि तीन काल—तीन लोक को ज्ञान, दर्शन जानता है। त्रिकाल-त्रिकाल। त्रिकाली वस्तु को त्रिकाली ज्ञान-दर्शन जाने-देखे, ऐसी उसकी शक्ति है। त्रिकाल, हों! आहाहा!

जिसके ज्ञान और दर्शन स्वभाव में, स्वभाव में तीन काल—तीन लोक के ज्ञान और दर्शन को जाने, ऐसा उसका स्वभाव है। ऐसा ही उसका स्वभाव है। स्वभाव को मर्यादा क्या हो? ऐसी अपरिमित जो शक्ति थी, उसे ध्यानाग्नि द्वारा प्रगट की। अब वह शक्ति जैसे यहाँ ध्रुव रही, ध्रुव थी। पर्याय प्रगट हुई, वह भी ध्रुव रहती है अर्थात् कायम ऐसी की ऐसी रहती है। समझ में आया? पंचास्तिकाय में उसे कूटस्थ कहा है। केवलज्ञान कूटस्थ। कूटस्थ अर्थात् ऐसा का ऐसा रहता है। है तो पर्याय। आहाहा! 'सादि अनन्त-अनन्त समाधि सुख में।' जिसका फल ऐसा है, उसका उपाय भी अलौकिक होगा न? बात समझ में आती है? आहाहा! जो स्वभाव की पूर्णता प्राप्त होती है, उसका कारण भी स्वभाव की दशा ही होती है। आहाहा! समझ में आया? त्रिकाली स्वभाव वस्तु है, उसके स्वभाव के आश्रय से पलटती स्वभावदशा, उस पूर्ण स्वभाव की प्राप्ति का यह उपाय है। न्याय समझ में आता है? आहाहा!

पुण्य-पाप (अधिकार) में नहीं कहा? कि बन्धभाव मोक्ष का कारण कैसे होगा? मोक्ष स्वभाव है तो मोक्ष का कारण होता है। यह समयसार में पुण्य-पाप (अधिकार) में कहते हैं। आहाहा! भगवान आत्मा मोक्षस्वभाव ही उसका है। मोक्षस्वभाव, वह मोक्ष के कारणरूप पर्याय होती है। मोक्ष का स्वभाव है, उसकी पर्याय मोक्ष के स्वभाव

में कारण, पूर्ण प्राप्ति का वह कारण होता है। बन्धभाव (कारण नहीं होता)। आहाहा! पुण्य-पाप (अधिका) में है। गजब काम किया है। समयसार में तो एक-एक कड़ी में और एक-एक पद में बहुत ही गम्भीर भाव।

जैसे पीपर का दाना है। लींडी पीपर—छोटी पीपर। कद में छोटी लगे परन्तु अन्दर में इसका स्वभाव तो चौंसठ पहरा चरपरा है। चौंसठ पहरी अर्थात् पूर्ण। उसे क्षेत्र की महत्ता की आवश्यकता नहीं। कि बड़ा क्षेत्र हो तो बड़ी शक्ति हो, ऐसा नहीं है। उसके स्वभाव का सामर्थ्य, क्षेत्र छोटा तो भी चौंसठ पहरा चरपरा रस जिसका स्वभाव है। उसका स्वभाव है। चौंसठ पहरी पर्याय उसमें से आती है। समझ में आया?

इसी प्रकार भगवान आत्मा सर्वज्ञ—सर्वदर्शी पूर्ण आनन्द, पूर्ण वीर्य, ऐसा उसका स्वभाव ही है। अनन्त चतुष्टय, अनन्त चतुष्टय, यह, हों! वह द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव नहीं। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त वीर्य—ऐसे अनन्त चतुष्टय शक्तिरूप से त्रिकाल है। उसमें ध्यानाग्नि से अर्थात् सुख समाधि के आनन्द के स्वाद की दशा द्वारा उस शक्ति की व्यक्तता होती है। आहाहा! यह बनिया अकेला व्यापार करे उसी और उसी में मग्न। लम्बी बुद्धि न हो, वहाँ। ऐई! बाबूभाई! यह सोना इस भाव, अमुक इस भाव में, वह की वह बात पूरे दिन। ऐसे को यह सूक्ष्म पड़े। आहाहा!

कहते हैं, जिसने तीन काल—तीन लोकवर्ती पदार्थ को जाना, ऐसी जिसकी जानने की शक्ति प्रगट हो गयी है। स्वभाव में शक्ति तो थी, वह अब प्रगट हुई है। **ऐसे ज्ञायकतारूप केवलज्ञान के स्थापन करने के लिये...** ऐसा ज्ञायकपना, केवलज्ञानपना **स्थापन करने के लिये सिद्धों का ज्ञानमय विशेषण किया।** आहाहा! उसमें नहीं आया? आ गया न उसमें? मोक्ष का। ३९ गाथा का (कलश ३३ समयसार में है) धीर है, उदात्त अनाकुल उसका विशेषण है, उसका आभूषण है। आहाहा! आत्मा का आनन्द प्रगट हुआ है, वह दशा धीर है। धीर है, अब शाश्वत् हो गयी है। उदार है। नयी-नयी पर्याय प्रगट हो, तथापि उसका अन्त आता नहीं। ऐसी उदार दशा है। आहाहा! वह अनाकुल है, आनन्दमय है। यह अनुभव के विशेषण हैं। मोक्षमार्ग के विशेषण है। आहाहा! यह तो अन्तर की क्रीड़ा की बातें हैं।

मुमुक्षु : प्रयोजनभूत....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह प्रयोजनभूत है, भाई!

वे भगवान नित्य हैं, निरंजन हैं, और ज्ञानमय हैं, ऐसे सिद्ध परमात्माओं को नमस्कार करके... आहाहा! ऐसे सिद्ध भगवान इस ध्यानाग्नि द्वारा हुए, ऐसा जिसे ज्ञान है, ऐसे ज्ञान में, सिद्ध भगवान कैसे होते हैं और कैसे हुए,—ऐसा जानकर उन्हें नमस्कार करता है। ऐसा का ऐसा णमो सिद्धाणं (नहीं करता), ऐसा कहते हैं। आहाहा! सिद्ध कैसे हुए? और हुए तब कैसे होते हैं? और हुए कैसे? ऐसा जिसे ज्ञान है, वह ज्ञान में जानकर सिद्ध को नमस्कार करता है।

मुमुक्षु : भाव नमस्कार।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। दोनों नमस्कार किये हैं।

अब **ग्रन्थ का व्याख्यान करता हूँ। यह नमस्कार शब्दरूप वचन...** नमस्कार के दो प्रकार। **नमस्कार शब्दरूप वचन द्रव्यनमस्कार है और केवलज्ञानादि अनन्त गुणस्मरणरूप...** अनन्त गुण की धारणा से अन्दर स्मरण करे। केवलज्ञान, केवलदर्शन अनन्त है, ऐसी जो श्रद्धा वर्त कर उसका भान, उसका स्मरण करते हैं। यह अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, ऐसा स्मरण है, वह भावनमस्कार है। आहाहा! है? आहाहा!

यह द्रव्य-भावरूप नमस्कार व्यवहारनयकर साधकदशा में कहा है,... क्या कहा है? कि वचन से नमस्कार और भाव से नमस्कार यह व्यवहार साधकदशा की अपेक्षा से बात की है। आहाहा! **साधकदशा में कहा है, शुद्धनिश्चयनयकर वंद्य-वंदकभाव नहीं है।** पूर्णानन्द के नाथ में वंद्य-वंदक है नहीं। श्रीमद् में आता है न? 'गुरु रहे छद्मस्थ पण विनय करे भगवान।' वंद्य-वंदकभाव होता ही नहीं। वह तो पूर्ण हो गया। साधकदशा में विकल्प से नमस्कार और निर्विकल्प से नमस्कार, ऐसा साधक में होता है। पूर्णदशा में फिर वंद्य-वंदक है नहीं। आहाहा! वे केवली भगवान किसका विनय करे? यह तो तब ऐसा अर्थ किया था। (संवत्) १९९५ में। केवली हुए, उन्होंने पूर्व में गुरु का विनय किया था, ऐसा उनके ज्ञान में आया। १९९५ में ऐसा अर्थ किया। 'आत्मसिद्धि' है न? आत्मसिद्धि के प्रवचन पाँच-छह हजार (पुस्तकें प्रकाशित हुई

हैं)। परन्तु ऐसा अर्थ तब किया था। ऐसा नहीं, केवलज्ञानी परमात्मा छद्मस्थ गुरु का विनय करे, यह बात बिल्कुल झूठी है। वंद्य-वंदक भाव छठवें (गुणस्थान) तक होता है। बाद में नहीं होता। तब कहा, इसका अर्थ ऐसा चाहिए। उनके कहने का आशय यह नहीं है। तब कहा था। सर्वज्ञ हैं, उनके ज्ञान में पूर्व में गुरु का विनय किया था, इसका ज्ञान हुआ, उसका नाम विनय कहा। दूसरा कुछ है नहीं। आहाहा! ऐई! यह लोगों को बहुत लगता है। श्रीमद् ने कहा, उनका एक-एक अक्षर... भाई! सुन न अब। श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्य को वन्दन करते हैं। कुन्दकुन्दाचार्य ऐसा कहते हैं। समझ में आया?

मुमुक्षु : कुन्दकुन्दाचार्य को उन्होंने वन्दन किया है, इसलिए उनकी सब बात स्वीकार है, ऐसा आ जाता है न?

पूज्य गुरुदेवश्री : सब बात स्वीकार। बाद में तो रखी है सब। पहले जरा अन्तर था। बाद में अन्त में बीस शास्त्र, सत्सूत्र के नाम दिये, उसमें उन्नीस दिगम्बर शास्त्र के नाम दिये। उसमें श्वेताम्बर का एक भी दिया नहीं। एक ग्रन्थ का नाम दिया है। हरिभद्रसूरि का ग्रन्थ है न। उसे बहुत, वह भगवानदास है न? बहुत स्पष्टीकरण करके चालीस रुपये का ग्रन्थ बनाया है। अनुकूल लगे न, वह ग्रन्थ बनाया, १९ का कुछ नहीं। बीस में से (वह) बड़ी पुस्तक बनायी है। श्वेताम्बर का है न। ग्रन्थ। चालीस रुपये की कीमत का। भगवानदास है न? अरे! क्या हो? भाई!

दिगम्बर है, वह कोई पक्ष नहीं। वस्तु का स्वरूप ऐसा है। वस्तु की स्थिति की मर्यादा ऐसी है। मुनि हो, तब नग्नदशा हो जाती है। अन्दर में तीन कषाय का अभाव होता है। विकल्प हो तो अट्ठाईस मूलगुण का विकल्प होता है। खड़े-खड़े आहार हो। नग्नदशा हो। अजीव की दशा ऐसी हो जाती है, करते नहीं। यह जैनदर्शन है। इसके अतिरिक्त यह भाषा आती है न? 'नग्गो मोक्खा भणियो।' नग्न को मोक्ष है। 'शेषा उमग्गा' दूसरे सब उन्मार्ग हैं। वहाँ तो स्पष्ट कहा है। स्थानकवासी और श्वेताम्बर, वे उन्मार्गी हैं, जैनमार्गी हैं ही नहीं। ऐई...! ऐई! मगनभाई! सुना है या नहीं वहाँ? धन्धे के कारण वांचन का समय कहाँ है? आत्मसिद्धि के प्रवचन हुए हैं। है या नहीं घर में? होंगे तो सही। रखे होंगे।

यहाँ कहते हैं, **वंद्य-वंदकभाव...** द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा से देखे तो है नहीं। केवलज्ञान होता है तो वंद्य-वंदकभाव है नहीं। आहाहा! जब तक साधकदशा है, तब उसे वाणी का विकल्प आता है। अन्दर स्मरण का। याद करे तो उस जाति का भाव (आता है)। पूर्ण दशा हो गयी, पश्चात् उसे द्रव्यनमस्कार नहीं और भाव (नमस्कार भी नहीं), दोनों नहीं। आहा! द्रव्यसंग्रह में भी आता है। द्रव्यसंग्रह है न? उसमें आता है। द्रव्यसंग्रह श्रीमद् ने बाद में कहा था। निकाला था उसमें से। ईडर में लाईब्रेरी में से। अपनी मौजूदगी में। उसमें भी ऐसा है। छठवें गुणस्थान तक वंद्य-वंदकभाव है। जब तक विकल्प है। अधूरी दशा है न? .... वस्तु की स्थिति ऐसी है। परन्तु श्वेताम्बर ने सब बदल दिया। केवली विनय करे, केवली को भी एक समय में ज्ञान और दूसरे समय में दर्शन। यह वह कहीं 'हें' पूर्ण ज्ञान और पूर्ण दर्शन जहाँ है... आहाहा! उसे खण्ड कैसा? और उसे क्रम कैसा? ऐसा जहाँ स्वरूप की स्थिति ऐसी है वहाँ। बहुत फेरफार हो गया।

यहाँ कहते हैं, **शुद्धनिश्चयनयकर वंद्य-वंदकभाव नहीं है। ऐसे पदखण्डनारूप शब्दार्थ कहा...** क्या कहा? एक-एक शब्द का भिन्न-भिन्न अर्थ किया। यह पद खण्डन किया। **पदखण्डनारूप शब्दार्थ कहा और नयविभागरूप कथनकर नयार्थ भी कहा,...** नय का कहा। अशुद्ध निश्चय से ऐसा होता है, असद्भूत से ऐसा होता है, शुद्ध निश्चय से उसे होता नहीं कुछ पर्याय में। **तथा बौद्ध, नैयायिक, सांख्यादि मत के कथन करने से मतार्थ कहा,...** शब्दार्थ, नयार्थ, मतार्थ, (आगमार्थ, भावार्थ)। पाँच बोल है न? यह पाँचों ही कहे, ऐसा कहते हैं। अरे! ऐसा सब ध्यान कहाँ इसे?

इस प्रकार अनन्त गुणात्मक सिद्धपरमेष्ठी संसार से मुक्त हुए हैं,... अनन्त गुणस्वरूप भगवान संसार से मुक्त हुए। यह आगम कहा। यह सिद्धान्त का अर्थ किया। शब्दार्थ, नयार्थ, मतार्थ, आगमार्थ। अब रहा भावार्थ। आहाहा! कहाँ से पुस्तक ... ... पास में आया? परमात्मप्रकाश है? आया होगा।

और निरंजन ज्ञानमयी परमात्मद्रव्य आदरनेयोग्य हैं,... यह भावार्थ। निरंजन ज्ञानमयी परमात्मद्रव्य। जिसे नय ही नहीं, जो ज्ञानमय अकेली वस्तु है, ऐसा परमात्मद्रव्य।

ज्ञानप्रधान की बात की है न! ज्ञानप्रधान। बाकी अनन्त गुण हैं। ज्ञानमयी परमात्मद्रव्य वस्तु, वह आदरणीय है। वही उपादेय है। पर्याय नहीं, निमित्त नहीं; मात्र त्रिकाली आत्मा उपादेय है। आहाहा! उपादेय माननेवाली पर्याय है परन्तु उपादेय द्रव्य है। समझ में आया? आहाहा! नित्य का निर्णय करनेवाला अनित्य है। परन्तु निर्णय करने का विषय है, वह नित्य है। आहाहा! वह उपादेय है। **यह भावार्थ है...** कहा न? पाँचों बोल हो गये। शब्दनय। पहला शब्द-शब्द। भावार्थ एक-एक शब्द का पद खण्डन किया। नय—सांख्यमति आदि की व्याख्या की। मत-अन्यमति की बात की। नयार्थ—निश्चय और व्यवहार। मत—अन्यमति, आगम—सिद्धान्त। भावार्थ।

इसी तरह शब्द नय, मत, आगम, भावार्थ व्याख्यान के अवसर पर सब जगह जान लेना। यह पाँच बोल प्रत्येक व्याख्या में ले लेना, कहते हैं। आहाहा! पहली ही गाथा में डाला। शब्द है, पद है, उसका अर्थ , नयार्थ—किस नय का वाक्य है, वह नयार्थ और मतार्थ—अन्यमति के कथन का निषेध के लिये मतार्थ, आगम ऐसा कहता है कि पूर्ण सिद्ध की प्राप्ति आदि वह आगम। भावार्थ—.... द्रव्य आदरणीय है, यह भावार्थ। आहाहा! कितना याद रहे इसमें? एक घण्टे में कितना (आवे)! अभी तो घण्टा भी नहीं हुआ। यह तो जिसे आत्मा का हित करना है, उसे यह सब प्रकार जानना चाहिए। समझ में आया? एकान्त न हो जाये, वस्तु के स्वरूप से विरुद्धता न हो, अविरुद्धता कैसे रहे, इसके लिये यह सब जानना चाहिए। समझ में आया? यह एक गाथा हुई।

'**जे जाया**' जो हुए '**झाणग्गियएँ**' ध्यानरूपी अग्नि से हुए। '**कम्म-कलंक डहेवि।**' इस गाथा का अर्थ करते हैं। '**जे जाया**' हुए '**झाणग्गियएँ**' ध्यान अग्नि से हुए। '**कम्म-कलंक डहेवि। णिच्च-णिरंजण-णाण-मय ते परमप्प णवेवि**' ऐसे परमात्मा को मैं नमस्कार करता हूँ। प्रत्येक शब्द का (अर्थ किया)... आहाहा! समझ में आया? यह तो अब शीतल पहर की बात है न! यहाँ शान्ति है। बाहर निकले थे तो मुम्बई में दस-दस हजार लोग, पन्द्रह-पन्द्रह हजार लोग। परन्तु सब सुनते थे। अब लोग सुनते हैं। ३२० गाथा सूक्ष्म। ग्यारह व्याख्यान (हुए)। सब सुनते थे। सुनो, भाई! मार्ग यह है। बहुत लोग। अब यहाँ तो शीतल पहर हुआ तो विस्तार से स्पष्टीकरण अधिक होता है। गिरधरभाई! आहाहा!

गाथा - २

अथ संसारसमुद्रोत्तरणोपायभूतं वीतरागनिर्विकल्पसमाधिपोतं समारुह्य ये शिवमय-निरुपमज्ञानमया भविष्यन्त्यग्रे तानहं नमस्करोमीत्यभिप्रायं मनसि धृत्वा ग्रन्थकारः सूत्रमाह, इत्यनेन क्रमेण पातनिकास्वरूपं सर्वत्र ज्ञातव्यम् -

२) ते वंदउँ सिरि-सिद्ध-गण होसहिं जे वि अणंत।
सिवमय-णिरुवम-णाणमय परम-समाहि भजंत।।२।।

तान् वन्दे श्रीसिद्धगणान् भविष्यन्ति येऽपि अनन्ताः।
शिवमयनिरूपमज्ञानमयाः परमसमाधिं भजन्तः।।२।।

ते वंदउं तान् वन्दे। तान् कान्। सिरिसिद्धगण श्रीसिद्धगणान्। ये किं करिष्यन्ति। होसहिं जे वि अणंत भविष्यन्त्यग्रे येऽप्यनन्ताः। कथंभूता भविष्यन्ति। सिवमयणिरुवमणाणमय शिवमयनिरुपमज्ञानमयाः, किं भजन्तः सन्तः इत्थंभूता भविष्यन्ति। परमसमाहि भजंत रागादि-विकल्परहितपरमसमाधिं भजन्तः सेवमानाः इतो विशेषः। तथाहि-तान् सिद्धगणान् कर्मतापन्नान् अहं वन्दे। कथंभूतान्। केवलज्ञानादिमोक्षलक्ष्मीसहितान् सम्यक्त्वाद्यष्ट-गुणविभूतिसहितान् अनन्तान्। किं करिष्यन्ति। ये वीतरागसर्वज्ञप्रणीतमार्गेण दुर्लभबोधिं लब्ध्वा भविष्यन्त्यग्रे श्रेणिकादयः। किंविशिष्टा भविष्यन्ति। शिवमयनिरुपमज्ञानमयाः। अत्र शिवशब्देन स्वशुद्धात्म-भावनोत्पन्नवीतरागपरमानन्दसुखं ग्राह्यं, निरुपमशब्देन समस्तोपमानरहितं ग्राह्यं, ज्ञानशब्देन केवलज्ञानं ग्राह्यम्। किं कुर्वाणाः सन्त इत्थंभूताः भविष्यन्ति। विशुद्धज्ञानदर्शनस्वभावशुद्धात्म-तत्त्वसम्यक्श्रद्धानज्ञानानुचरणरूपामूल्यरत्नत्रयभारपूर्णं मिथ्यात्वविषयकषायादिरूपसमस्त-विभावजलप्रवेशरहितं शुद्धात्मभावनोत्थसहजानन्दैकरूपसुखामृतविपरीतनरकादिदुःखरूपेण क्षारजलेन पूर्णस्य संसारसमुद्रस्य तरणोपायभूतं समाधिपोतं भजन्तः सेवमानास्तदाधारेण गच्छन्त इत्यर्थः। अत्र शिवमयनिरुपमज्ञानमयशुद्धात्मस्वरूपमुपादेयमिति भावार्थः।।२।।

अब संसार-समुद्र के तरने का उपाय जो वीतराग निर्विकल्प समाधिरूप जहाज है, उस पर चढ़ के उस पर आगामी काल में कल्याणमय अनुपम ज्ञानमई होंगे, उनको मैं नमस्कार करता हूँ-

शिवमयी निरुपम ज्ञानमय उत्कट समाधि सेवते।
जो सिद्धगण होंगे अनन्तों नमन हो उनके लिये।।२।।

अन्वयार्थ :- ['अहं'] मैं [तान्] उन [सिद्धगणान्] सिद्ध समूहों को [वन्दे] नमस्कार करता हूँ, [येऽपि] जो [अनन्ताः] आगामी काल में अनंत [भविष्यन्ति] होंगे। कैसे होंगे? [शिवमयनिरूपमज्ञानमया] परमकल्याणमय, अनुपम और ज्ञानमय होंगे। क्या करते हुए? [परमसमाधि] रागादि विकल्प रहित परमसमाधि उसको [भजन्तः] सेवते हुए।

भावार्थ :- जो सिद्ध होंगे, उनको मैं वन्दता हूँ। कैसे होंगे, आगामी काल में सिद्ध, केवलज्ञानादि मोक्षलक्ष्मी सहित और सम्यक्त्वादि आठ गुणों सहित अनंत होंगे। क्या करके सिद्ध होंगे? वीतराग सर्वज्ञदेवकर प्ररूपित मार्गकर दुर्लभ ज्ञान को पाके राजा श्रेणिक आदिक के जीव सिद्ध होंगे। पुनः कैसे होंगे? शिव अर्थात् निज शुद्धात्मा की भावना, उसकर उपजा जो वीतराग परमानंद सुख, उस स्वरूप होंगे, समस्त उपमा रहित अनुपम होंगे और केवलज्ञानमई होंगे। क्या करते हुए ऐसे होंगे? निर्मल ज्ञान-दर्शनस्वभाव जो शुद्धात्मा है, उसके यथार्थ श्रद्धान-ज्ञान-आचरणरूप अमोलिक रत्नत्रयकर पूर्ण और मिथ्यात्व विषय कषायादिरूप समस्त विभावरूप जल के प्रवेश से रहित शुद्धात्मा की भावना से उत्पन्न हुआ जो सहजानंदरूप सुखामृत, उससे विपरीत जो नारकादि दुःख वे ही हुए क्षारजल, उनकर पूर्ण इस संसाररूपी समुद्र के तरने का उपाय जो परमसमाधिरूप जहाज उसको सेवते हुए, उसके आधार से चलते हुए, अनंत सिद्ध होंगे। इस व्याख्यान का यह भावार्थ हुआ, कि जो शिवमय अनुपम ज्ञानमय शुद्धात्मस्वरूप है वही उपादेय है।।२।।

गाथा - २ पर प्रवचन

अब संसार-समुद्र के तरने का उपाय जो वीतराग निर्विकल्प समाधिरूप जहाज है,... आहाहा! संसार सिन्धु। बड़ा समुद्र। अज्ञान में उत्पत्ति होने से उसे चौरासी लाख में उत्पत्ति हो, ऐसा संसार महा समुद्र। संसार सिन्धु। समुद्र कहा न? देखो न! संसार समुद्र। संसाररूपी महा सिन्धु। आहाहा! **तरने का उपाय...** उससे तिरने का उपाय। **जो वीतराग निर्विकल्प समाधिरूप जहाज...** आहाहा! वीतराग निर्विकल्प शान्तिरूपी, समाधिरूपी जहाज। आहाहा! जहाज। भवसमुद्र को तिरने के लिये.... आहाहा!

वहाँ रमणीकभाई के मकान में उतरे थे न? वहाँ नजदीक में ही समुद्र है। परन्तु

समुद्र का पानी तो कहीं.... अपार... अपार। बगुले सफेद बगुले, मछलियाँ खाने (के लिये) सैंकड़ों वहाँ घूमते हैं। नजदीक ही समुद्र के किनारे रमणीकभाई का मकान है। आमोदवाले नहीं? पाँच करोड़ रुपये हैं। मकान ही सत्तर लाख का है। उस मकान में उतरे थे, वह सत्तर लाख का है। एक का एक मकान। साथ में यह समुद्र। कहा, यह भवसिन्धु। आहाहा! इसके एक-एक बिन्दु में असंख्य पानी (के) जीव।

मुमुक्षु : एक-एक बिन्दु में असंख्य जीव।

पूज्य गुरुदेवश्री : एक-एक बिन्दु में असंख्य जीव। ऐसे बड़ा दल, ऐसा लम्बा, ऐसा गहरा बहुत। आहाहा! उसका कब पार आवे? कब मनुष्य हो, उसमें कब आर्यकुल मिले।

मुमुक्षु : ऐयरोप्लेन में बैठकर जाये तो एक दिन में उतर जाये।

पूज्य गुरुदेवश्री : धूल में भी... यह तो समुद्र (पार उतर जाये), परन्तु यह संसार समुद्र? आहाहा!

मुमुक्षु : वह अन्तर्मुहूर्त में तिर जाये।

पूज्य गुरुदेवश्री : आहाहा! कहते हैं कि वह (पार) उतरने का उपाय? वीतराग निर्विकल्प समाधि जो कि निश्चयमोक्षमार्ग। निश्चय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, वह वीतराग निर्विकल्प शान्ति है। आहाहा! व्यवहाररत्नत्रय विकल्प है, वह मोक्ष का उपाय नहीं है, ऐसा कहते हैं। आहाहा! संसारसमुद्र को तिरने का उपाय वीतराग अभेद समाधि शान्त... शान्त। अखण्डानन्द प्रभु आनन्द और शान्ति के एकरूप स्वभाव से भरपूर प्रभु, उसकी सन्मुखता की समाधि। स्वयं समाधिस्वरूप है। त्रिकाली समाधिस्वरूप ही है। अर्थात्? वीतरागी अभेद समाधिस्वरूप ही उसका है। उसमें से परिणति वीतरागी दशा प्रगट करना, वह संसार समुद्र को तिरने का उपाय है। आहाहा!

वीतराग अभेद समाधिरूप जहाज, **उस पर चढ़के...** आहाहा! पूर्ण परमात्मस्वरूप 'समयसार'.... वह पर्याय में आया। यह १४४ (गाथा) में आया। कर्ता-कर्म (अधिकार) की १४४ गाथा है न? एक समय की पर्याय में अखण्ड प्रतिभासमय, प्रभु अखण्ड प्रतिभासमय एक समय में उसे जानता है। ऐसी जो निर्विकल्प ज्ञानदशा, जिसमें भगवान

अखण्ड प्रतिभास, पूर्ण स्वरूप का ज्ञान होता है। पूर्ण स्वरूप उसकी पर्याय में आता नहीं। परन्तु उसका प्रतिभास, एक समय में अखण्ड प्रतिभास होता है। ऐसा जो परमात्मरूप, समयसाररूप... आहाहा! समझ में आया? यह मोक्ष का मार्ग। वह यह वीतरागस्वरूप कहा।

वीतराग निर्विकल्प समाधिरूप जहाज, **उस पर चढ़के उस पर आगामी काल में कल्याणमय अनुपम ज्ञानमयी होंगे,...** आहाहा! भविष्य में मोक्ष होंगे सिद्ध, उन्हें मैं नमस्कार करता हूँ। कल-परसों कहा था न? नहीं? णमो लोए सव्व त्रिकालवर्ती अरिहंताणं। धवल में यह पद है। णमो लोए सव्व त्रिकालवर्ती अरिहंताणं। कितनी विशालता! णमो लोए सव्व त्रिकालवर्ती सिद्धाणं। णमो लोए सव्व त्रिकालवर्ती आईरियाणं, णमो लोए सव्व त्रिकालवर्ती उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व त्रिकालवर्ती साहूणं। पाँच पद ऐसे हैं। फिर संक्षिप्त करके किया, णमो लोए सव्व साहूणं कर दिया। यह सबको लागू पड़ता है। णमो लोए सव्व अरिहंताणं, णमो लोए सव्व (सिद्धाणं).... त्रिकालवर्ती साथ में डाल देना। आहाहा! यह यहाँ (नमस्कार) करते हैं।

भविष्य में सिद्ध होंगे, उन्हें मैं अभी नमस्कार करता हूँ। है? **आगामी काल में कल्याणमय...** आहाहा! **अनुपम ज्ञानमयी होंगे,...** सिद्ध होंगे। आहाहा! **उनको मैं नमस्कार करता हूँ।** आहाहा! दूसरी गाथा।

२) ते वंदउँ सिरि-सिद्ध-गण होसहिं जे वि अणंत।
सिवमय-णिरुवम-णाणमय परम-समाहि भजंत।।२।।

आहाहा! इसका शब्दार्थ। **मैं...** योगीन्द्रदेव कहते हैं कि **मैं उन सिद्ध समूहों को...** देखा! एक-दो नहीं, हों! समूह। अनन्त सिद्ध समूह होगा। आहाहा! समयसार की पहली गाथा में '**वंदित्तु सव्वसिद्धे**' कहा है न? वे यह सिद्धगण। ऐसा है न! सिद्धरूपी गण-समूह। **वन्दे नमस्कार करता हूँ, जो आगामी काल में अनन्त होंगे।** भविष्य में अनन्त सिद्ध होंगे। आहाहा! अभी अनन्त काल बाद होंगे। उन्हें मैं नमस्कार करता हूँ। वह जीव अभी नरक में पड़ा हो। समझ में आया? परन्तु भविष्य में होगा। आहाहा!

आगामी काल में अनन्त होंगे। कैसे होंगे? 'शिवमयनिरूपमज्ञानमया' शिव अर्थात् परमकल्याणमय। परमकल्याणमय सिद्धपद होगा। आहाहा! णमोत्थुणं में आता है न? 'सिवमलयमरु।' णमोत्थुरणं में आता है। णमोत्थुणं। णमोत्थुणं, अरिहंताणं... सिवमलयमरुयमणंतमक् खयमव्वाबाहम... आहाहा! श्वेताम्बर में णमोत्थुणं आता है। **परमकल्याणमय, अनुपम...** कैसे सिद्ध होंगे? श्रेणिक आदि। टीका में लेंगे। अनुपम— जिसे कोई उपमा नहीं। आहाहा! ऐसे सिद्ध होंगे। **ज्ञानमय होंगे....** उसमें डाला था न? नित्य निरंजन ज्ञानमय। तीन शब्द पहले थे। अब यह डाला। **'शिवमयनिरूपमज्ञानमया'** अकेला ज्ञानमय... आहाहा!

क्या करते हुए? वापस यह भी डाला। भविष्य में होंगे। भूतकाल में हुए, वे क्या करके हुए? कि ध्यानाग्नि से। भविष्य में होंगे। क्या करके होंगे? आहाहा! कि परमसमाधि। **रागादि विकल्परहित परमसमाधि उसको सेवते हुए। 'भजन्तः'** आहाहा! वीतरागीदशा को भजता हुआ, सेवन करता हुआ। त्रिकाली वीतरागस्वरूप जिनस्वरूप प्रभु के आश्रय से प्रगट हुई वीतरागीदशा, उसे सेवन करता हुआ। वीतरागीदशा को सेवन करते हुए सिद्ध होंगे। आहाहा!

'शिवमयनिरूपमज्ञानमया परमसमाधि भजन्तः' भजन करे वह। वीतरागी पर्याय का भजन करते हुए सिद्ध होंगे। आहाहा! व्यवहाररत्नत्रय को सेवन करते हुए सिद्ध होंगे, वह नहीं। आहाहा! वे कहते हैं न कि मोक्षमार्ग एक ही है। वे कहें, नहीं, दो हैं। रतनचन्द कहते हैं। रतनचन्द मुखत्यार है न? उनके गाँव के। ऐसा कि, दो मोक्षमार्ग न माने, वे भ्रम में हैं। टोडरमलजी कहते हैं, दो मोक्षमार्ग माने, वे भ्रम में हैं। आहाहा! यह एक ही मार्ग है। आहाहा! **क्या करते हुए?** समाधि करते हुए। वीतरागीदशा करते हुए। निश्चय मोक्षमार्ग है। समझ में आया? एक ही है। **'एको मोक्षपथा'** आता है न? कलश आता है। आहाहा! यह शब्दार्थ किया। अब विशेष कहेंगे।

भावार्थ :- जो सिद्ध होंगे... जो सिद्ध हुए, उनकी बात पहली गाथा में की। अब सिद्ध होंगे, यह दूसरी (गाथा) में बात करते हैं। आहाहा! तीन काल को पेट में ले लिया है न। आहाहा! परमात्मप्रकाश को करने से पहले में ऐसे सिद्धों को नमस्कार

करता हूँ, ऐसा कहते हैं। आहाहा! परमात्मप्रकाश प्रगट हो गया जिन्हें और जिन्हें परमात्मप्रकाश प्रगट होगा, उसे वन्दन करके परमात्मप्रकाश का व्याख्यान करूँगा। आहाहा! समझ में आया? ऐसा वीतरागमार्ग, भाई! सूक्ष्म बहुत है। साधारण बुद्धिवाले ऐसा मानते हैं कि दया पालो, व्रत करो, अपवास करो। यह ओळी करे। करते हैं न ओळी? रूखा खाना। धूल भी नहीं। सुन! यह तो सब राग की क्रिया, राग मन्द हो तो। आहाहा!

मुमुक्षु : वीतराग निर्विकल्प समाधि यह है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह है। रागरहित निर्विकल्प शान्ति, श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र, यह तीन निर्विकल्प शान्ति है। समरसी वीतरागभाव है। जिसमें आनन्द का स्वाद है, ऐसी निर्विकल्प समाधि। आहाहा! ऐसा मार्ग है। अभी 'जैनसन्देश' में आया है, शुभभाव यह पहले करना चाहिए। शुभभाव में आवे तो बहुत है। धूल में तेरे... आहाहा!

मुमुक्षु : अपेक्षा लगे?

पूज्य गुरुदेवश्री : किसकी अपेक्षा? शुभभाव अधर्म है।

मुमुक्षु : मोक्षमार्ग भी निश्चय से शुभ है।

पूज्य गुरुदेवश्री : वह शुभ तो निश्चय, वह शुभ है। पुण्य-पाप के अधिकार में आया है न! पुण्य-पाप। जो निश्चयमोक्षमार्ग है, उसे शुभ कहा। वह शुभ नहीं। आहाहा! पुण्य-पाप अधिकार में पहली गाथाओं में है। आहाहा!

आत्मा आनन्द का नाथ प्रभु पूर्ण शक्ति सामर्थ्य। शक्ति अर्थात् सामर्थ्य। जिसका ज्ञान, दर्शन, आनन्द, ऐसी जिसकी शक्ति है। शक्तिवान वस्तु है, उसकी ऐसी शक्ति है। उस शक्तिवान को श्रद्धा में लेकर, उसे ज्ञान का ज्ञेय बनाकर, ज्ञान में लेकर स्थिरता होना, वह मोक्ष का उपाय है। आहाहा! उसकी श्रद्धा में तो पहले निर्णय करे कि यह ही मार्ग है। आहाहा! एकान्त है। और ऐसा कहते हैं। सम्यक् एकान्त है। यह एक ही मार्ग है, दूसरा मार्ग नहीं है। आहाहा!

मुमुक्षु : दूसरा नहीं, यह अनेकान्त है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह अनेकान्त है। यह है और दूसरा नहीं, यह अनेकान्त हुआ। यह है और यह भी है, यह अनेकान्त नहीं है। यह तो फुदड़ीवाद है। आहाहा!

उनको मैं वन्दता हूँ। कैसे होंगे, आगामी काल में सिद्ध, केवलज्ञानादि मोक्षलक्ष्मी सहित... आहाहा! **केवलज्ञानादि मोक्षलक्ष्मी सहित...** यह धूल की लक्ष्मीसहित नहीं। आहाहा! यह पर्याय की बात है, हों! केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त शान्ति, स्वच्छता, प्रभुता ऐसी अनन्त शक्ति की व्यक्तता जो हुई, वह मोक्षलक्ष्मी। अनन्त जितने गुण थे, उन सबकी पर्याय की व्यक्तता हुई। आहाहा! ऐसी ज्ञानादि मोक्षलक्ष्मी सहित **और सम्यक्त्वादि आठ गुणों सहित...** मुख्यरूप से। गुण अर्थात् है तो पर्याय। भाषा तो गुण है। **सम्यक्त्वादि आठ गुणों सहित अनन्त होंगे।** आहाहा! ऐसे अनन्त जीव भविष्य में होंगे। ओहोहो! अपना आत्मा भी भविष्य में सिद्ध होगा, उसे वर्तमान में नमस्कार करते हैं। बराबर है? आहाहा! **क्या करके सिद्ध होंगे?** यह विशेष कहेंगे।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)